# लुप्त–प्राय जन्तु : कछुआ

ऋचा शुक्ला
एसोसिएट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग
नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ(उ0प्र0)–226004, भारत
sanjiveshukla@gmail.com

हमारा भारत देश अपनी जैव–विविधता के लिए विश्व में एक विशिष्ट स्थान रखता है। ऊँचे–ऊँचे पर्वत, दूर तक फैले हरे–भरे मैदान, लहराती गंगा, सतलज, यमुना, व्यास, सरयू आदि नदियां, विशाल सागर और रेतीले मरुस्थल, ये सब एक साथ, एक देश में दिखाई देते हैं तो वो है भारत देश। लेकिन वास्तविकता ये है कि आज की अपेक्षा हमारी जैव–विविधता पहले कहीं अधिक समृद्ध थी। यदि बीते कुछ वर्षों का आंकलन किया जाये तो स्पष्ट दिखाई देता है कि हमने बहुत कुछ खोया है। विकास की अंधी दौड़, बढ़ते वैश्विक तापमान, शहरीकरण एवं औद्योगीकरण आदि कुछ कारण हैं जिन्होंने हमारी अतुलनीय जैव–संपदा को अपूर्णनीय क्षति पहुंचाई है जिसमें मुख्य रूप से जीव–जन्तु एवं वनस्पतियां सम्मिलित हैं।

*चित्रा इंडिका*

कछुआ एक पारिस्थितिक मित्र के रूप में हमारी सेवा करता है तथा सड़े–गले जीवों व वनस्पतियों को खाकर, पारिस्थितिक तंत्र की सफाई व संतुलन स्थापित करने का कार्य करता है। परन्तु मानव की लालची प्रवृत्ति नें आज इन जानवरों के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है व इनकी कई प्रजातियां लुप्तप्राय की श्रेणी में आ गई हैं।

कछुआ सरीसृप वर्ग के कीलोनिया समूह का जन्तु है। प्रकृति से अत्यन्त ही सुस्त किन्तु विशेष प्रकार के कवच के कारण इनकी एक अलग ही पहचान है। कीलोनिया शब्द ग्रीक भाषा के शब्द "कीलोन" से लिया गया जिसका अर्थ होता है कवच या इंटरलॉकिंग शील्ड[1]। कछुए अपना सिर एवं पैर इस कवच से अंदर बाहर कर सकते हैं एवं यह कवच विशेष प्रकार की हड्डियों से बना होता है जो वास्तव में इनकी पसली से विकसित होती हैं। कछुए के कवच भी कई रंगों[1] में मिलते हैं जैसे काला, लाल, भूरा या ओलिव ग्रीन। किसी–किसी प्रजाति में कवच लाल, नारंगी भी होते हैं। थलीय कछुओं में यह कवच बहुत भारी होता है जबकि जलीय कछुओं में यही कवच कम भारी होता है ताकि ये सुविधापूर्वक तैर सकें। हल्के कवच में हड्डियों के बीच जगह होती हैं जिन्हें फौंटेनेल्स[1] कहते हैं। लैदरबैक सी टर्टल में कवच अत्यंत ही हल्का होता है क्योंकि इसमें काफी अधिक संख्या में फौंटेनेल्स होते हैं।

जीवाश्म अध्ययन के आधार पर कछुए आज से दो सौ बीस मिलियन वर्ष पूर्व भी मिलते थे जो इनके प्राचीनतम होने का प्रमाण है। यहाँ तक कि साँपों, छिपकली एवं घड़ियाल आदि सरीसृप वर्ग के अन्य जन्तुओं की अपेक्षा कछुए अधिक प्राचीन हैं पर आज इन्हीं प्राचीनतम जन्तुओं का अस्तित्व खतरे में है। वर्तमान में इनकी कई प्रजातियां पूर्ण रूप से लुप्त हो चुकी हैं और कुछ लुप्तप्राय हैं। इस समय कछुआ रेड लिस्ट व अन्य वन्य जीव संरक्षण अधिनियम[2] 1972 की सूची में शामिल है। विश्व में इनकी संख्या 263 है[1], एशिया में कुल 85 प्रजातियां हैं जबकि उत्तर प्रदेश में 15 प्रजातियां[2] हैं। जिनके नाम इस प्रकार हैं–

*लिस्सेमिस पंक्टेटा*

1. इंडियन रूफ्ड टर्टल(*पुंगथुरा टैक्टम*)
2. इंडियन टेंट टर्टल(*पुंगथुरा टैरिटोरिया सरकमडाटा*)
3. इंडियन टेंट टर्टल(*पुंगथुरा टैरिटोरिया फ्लेविरैन्ट्रिस*)
4. ब्राउन रूफ्ड टर्टल(*पुंगथुरा स्मिथाई*)
5. स्पौटेड पौन्ड टर्टल(*जियोक्लेमाइस हैमिलटोनाई*)
6. क्राउन्ड रिवर टर्टल(*हार्डेला थुरजाई*)
7. थ्री स्ट्राइप्ड रूफ्ड टर्टल(*कछुगा टौंगटा*)
8. पेटेंड रूफ्ड टर्टल(*कछुगा कछुगा*)
9. इंडियन आइड टर्टल(*मौरिनिया पेटेरसाई*)
10. इंडियन ब्लैक टर्टल(*मिलैनोचेलिस त्रिजुगा*)
11. इंडियन सौफ्ट शैल टर्टल(*एस्पिडोरेटिस गैंगेटिकस*)
12. ट्राइकैरिनेट हिल टर्टल(*मिलैनोचेलिस ट्राईकैरिनेटा*)
13. इंडियन पीकॉक सौफ्ट शैल टर्टल(*एस्पिडोरेटिस ह्यूरम*)
14. इंडियन फ्लैप शैल टर्टल(लिस्सेमिस *पंक्टेटा*)
15. स्माल हेडेड सौफ्ट शैल टर्टल(चित्रा इंडिका)

वर्तमान समय में सबसे बड़ा जीवित कछुआ लैदरबैक सी टर्टल(*डर्मोचेलिस कैरियेसिया*)[1] है, जिसका कवच 200 सेंटीमीटर और वजन 900 किलोग्राम है जो एटलांटिक, पैसिफिक व हिंद महासागर में मिलता है, लुप्तप्राय है। *जियोचीलोन मिओलैनिया* जिसे जाइंट टॉरटॉइस भी कहते हैं, उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका तथा अफ्रीका में मिलते थे[1] पर अब विलुप्त हो चुके हैं। ऐसा माना जाता है कि मनुष्यों ने इनका शिकार भोजन के लिए किया होगा जिससे इनका अस्तित्व इन जगहों पर खत्म हो गया। एकमात्र जीवित *जाइन्ट टॉरटॉइस* की प्रजाति अब सिर्फ गैलपैगोस द्वीप पर मिलती है जो 130 सेंटीमीटर की लम्बाई और 300 किलोग्राम के वजन में मिलता है।

सबसे छोटा कछुआ *स्पेकेल्ड पैडलोपर टॉरटॉइस* है जो दक्षिण अफ्रीका में है। यह 8 सेंटीमीटर लम्बाई और 140 ग्राम भार का है। आमतौर पर सभी कछुए असमतापी, दिनचर, प्रजनन द्वारा अंडे देते हैं, आँखों में रॉड की संख्या अधिक होने के कारण रात में भी देखने की क्षमता होती है, कोंन्स के कारण रंगभेद में सक्षम होते हैं[1]। सभी कछुओं के जबड़े काफी मजबूत होते हैं जो भोजन खाने एवं चबाने के लिए उपयुक्त होते हैं यद्यपि इनके जबड़े में दांतों के स्थान पर कंटीली धारियां होती हैं जो भोजन अथवा शिकार पकड़ने में सहायक होती हैं[3]। आकार, आवास एवं भोजन के आधार पर कछुओं को निम्न प्रकार में विभाजित किया गया है–

1. **थलचर या टॉरटॉयस**

जीवन पर्यन्त जमीन पर रहते हैं। ये कछुए शाकाहारी होते हैं और वनस्पति, घास या हरी पत्ती आदि खाते हैं। ये अपनी जीभ को भोजन निगलने में प्रयोग करते हैं[1] पर और सरीसर्पों की तरह अपनी जबान को भोजन चिपकाने के लिए बाहर नहीं निकाल पाते हैं। इनका आकार कुछ से0मी0 से लेकर दो मीटर तक होता है। इनके पैर छोटे एवं मजबूत होते हैं। मादा कछुआ एक से तीस की संख्या तक अंडे देती हैं जिसमें से 60–120 दिनों में बच्चे बाहर आ जाते हैं। थलचर कछुओं का जीवनकाल काफी लम्बा होता है, यहाँ तक कि डेढ़ सौ साल पुराने कछुए भी मिलते हैं। अत: चीन देश में इन कछुओं को दीर्घायु का प्रतीक माना जाता है।

2. **जलचर(स्वच्छ पानी के) टेरापीन्स**

जलचर कछुए स्वच्छ पानी जैसे नदी या तालाब में मिलते हैं। आहार के आधार पर ये कछुए शाकाहारी अथवा मांसाहारी होते हैं। शाकाहारी कछुए मुख्यत: जलीय वनस्पति खाते हैं जबकि मांसाहारी कछुए घोंघे, कीड़े–मकोड़े और मरे जानवरों का मांस खाते हैं। शाकाहारी कछुओं का आकार छोटा, कठोर कवच होता है और लोग उनको पालतू पशु की तरह मछली के एक्वेरियम में रखते हैं। मांसाहारी कछुओं का आकार थोड़ा बड़ा एवं कवच मुलायम होता है। यद्यपि दोनों ही तरह के कछुओं में मादा को अंडे देने के लिए जल से बाहर निकल कर आना पड़ता है।

3. **जलचर(खारे पानी के) टर्टल**

खारे पानी अर्थात समुद्र में मिलने वाले कछुए इस श्रेणी में आते हैं। ये मांसाहारी होते हैं और मुख्यत: जेली फिश, स्पंज और दूसरे छोटे जानवरों का भक्षण करते हैं। कुछ कछुए मरे जानवरों का मांस या शैवाल पर भी निर्भर रहते हैं। इनके पैरों के स्थान पर फ्लिपर्स होते हैं जो इनको समुद्री लहरों में तैरने में सहायता करते हैं। स्वच्छ पानी के कछुओं की तुलना में समुद्री कछुओं का थल पर आना बहुत कम होता है। मादा कछुआ ही केवल प्रजनन हेतु थल पर आती हैं और निषेचन के बाद अंडे में से निकले बच्चे, नर या मादा, थल से धीरे–धीरे, काफी मेहनत मशक्कत के बाद, समुद्र तक पहुँच पाते हैं। इसके अतिरिक्त नर कछुए कभी भी समुद्री जल से बाहर नहीं आते हैं। अंडे से निकले बच्चे जब तक अपने स्थान से समुद्र तक पहुंचते हैं, उस बीच में भी कुछ शिकारी पक्षी द्वारा मार दिये जाते हैं जो इनकी संख्या कम होने का एक कारण है।

उपरोक्त तीनों प्रकार के ही कछुओं की प्रजातियां शनैः शनैः कम होती जा रही हैं[5] और लुप्तप्राय की श्रेणी में किसी भी अन्य कशेरूकी जन्तु से इनका स्थान सबसे ऊपर है। स्वादिष्ट मांस के लिए इन कछुओं का निर्ममता से शिकार किया जाता है[1]। एशिया[1] के ही कुछ हिस्सों में कछुए का सूप प्रसिद्ध है तो कहीं कछुए की चर्बी सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री में प्रयोग होती है और "क्रेमा दि टैरटुगा" के नाम से बिकती है। चाइनीज भोजन में कछुओं के कवच का प्रयोग किया जाता है। आंकड़े यह बताते हैं कि ताइवान देश में टनों कवच प्रतिवर्ष आयात किया जाता है और इसके लिए कितने कछुए मारे जाते होंगे, इसका अनुमान स्वतः ही लगाया जा सकता है। उपरोक्त कारणों को देखने के बाद फरवरी 2011 में कछुआ विशेषज्ञों ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की है[1] जिसमें लगभग 25 प्रजातियों को लुप्त एवं 40 प्रजातियों को लुप्तप्राय की श्रेणी में रखा है। इनमें भी एशिया की प्रजातियों के जीवन पर, अस्तित्व पर लुप्त होने का खतरा सर्वाधिक है जिनमें मुख्य कारण मानवजनित क्रियाएं हैं जैसे इनके प्राकृतिक आवास नष्ट होना एवं गैर कानूनी ढंग से व्यापार। लोगों की मांग को पूरा करने के लिए स्वच्छ पानी के कछुए भारत के उत्तरी राज्यों से पकड़कर उत्तर पूर्वी राज्यों में ले जाये जाते हैं। नर्म मांस एवं औषधीय गुणों के कारण सौफ्ट शैल्ड कछुए जैसे *नोलेसोनिका गैन्गेटिका*[4] , *नोलसोनिया हयमरम* एवं *चित्रा इंडिका* जैसे कछुए बेचे जाते हैं। जल प्रदूषण एवं जल विकास परियोजनाओं के कारण भी कछुओं की प्रजाति पर अपना अस्तित्व बचाये रखने का संकट गहराता जा रहा है। वन्य जीव संरक्षण से जुड़े विशेषज्ञों ने इस कमी को ऐशियन टर्टल क्राइसिस[1] का नाम दिया है जिसमें मुख्यतः दक्षिण पूर्व एशिया के कई हिस्से कछुओं से रिक्त होते जा रहे हैं। एशियन प्रजातियों में 75 प्रतिशत टॉरटाइस एवं टेरापीन्स की प्रजातियां लुप्तप्राय की श्रेणी में हैं।

कछुए हमारे जलीय परितंत्र के लिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि जलीय वनस्पति, कमजोर, बीमार मछलियों या सड़े–गले मांस को खाकर जैविक प्रदूषण नियंत्रण में सहायता करते हैं। इसके साथ ही खाद्य–श्रृंखला में एक प्रमुख भूमिका के द्वारा पारिस्थितिकीय संतुलन बनाने में भी सहायता करते हैं। समुद्री तट पर पर्यटकों की बढ़ती संख्या, तट पर बढ़ती रेत जिससे अंडे या तो टूट जाते हैं या दिये गये स्थान पर ही दब जाते हैं तथा बढ़ता प्रदूषण लेदरबैक कछुए के लुप्तप्राय होने के लिए उत्तरदायी हैं। मलेशिया, श्रीलंका, भारत तथा थाईलैंड आदि जगहों पर इस कछुए की संख्या में निरंतर कमी आ रही है। यद्यपि सरकारी तथा गैर–सरकारी संगठनों द्वारा इन कछुओं को बचाने के लिए काफी प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु जब तक हम आप सब मिलकर इस दिशा में प्रयास नहीं करेंगे तब तक इसी प्रकार कछुए लुप्तप्राय एवं इसके बाद विलुप्त हो जायेंगे। वर्तमान में कतरनिया घाट(उ0प्र0) पर कछुआ पुनर्वास योजना भी चल रही है जिसके चलते स्वच्छ पानी के कछुओं को, अंडे में से निकले बच्चों को सुरक्षित तरीके से इनके आवास पर पहुंचाया जाता है तथा विश्व स्तर पर टर्टिल सर्वाइवल एलान्स(टी0एस0ए0) नामक संस्था कार्यरत है। इसके साथ–साथ हम सभी को इसके गैर–कानूनी तरीके से व्यापार एवं इसके भक्षण पर रोक लगाकर कछुओं को लुप्तप्राय होने से बचाना होगा। कछुओं को लुप्त होने से बचाने के लिए निम्न कुछ उपाय सहायक हो सकते हैं–

1. कछुओं की तस्करी को रोकने हेतु प्रभावी नियम बनाना व उसको सख्ती से लागू करना।
2. कछुओं के आवास स्थलों व प्रजनन स्थलों का समुचित संरक्षण करना।
3. कछुओं की विभिन्न प्रजातियों की पहचान व उनकी संख्या हेतु आंकड़े इकट्ठा करना।
4. छात्र–छात्राओं व सामान्य जन में प्रेरणा व जागरुकता पैदा करना।
5. कृत्रिम संसाधनों से कछुओं का प्रजनन कराकर पुनर्वासित करना।

## संदर्भ

1. टर्टल फ्रॉम विकीपीडिया, द फ्री एनसाइक्लोपीडिया, एच0 टी0 एम0, पृ0 सं0 17 ऑफ 28, 5 ऑफ 18।
2. कछुआः एक पर्यावर्णीय मित्र, पर्यावरण निदेशालय, उ0 प्र0, जन्तु विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय।
3. निगम, एच0 सी0(2002–2003) बायोलॉजी ऑफ कार्डेटा, विशाल पब्लिशिंग कम्पनी, मु0 पृ0 161–190।
4. टीकादार, बी0 के0(1983) थ्रैटेन्ड एनिमल्स ऑफ इण्डिया, जूलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, कोलकता, मु0 पृ0 227–235।
5. निगम, एच0 सी0(2011–2012) मॉडर्न ट्रेंड्स इन बायोलॉजी एण्ड इकोनॉमिक जूलॉजी, विशाल पब्लिशिंग कम्पनी, सेक्शन 7, पृ0 375–391।